ISSN : 2395-4132

THE EXPRESSION

An International Multidisciplinary e-Journal

Bimonthly Refereed & Indexed Open Access e-Journal

The Expression Journal

Impact Factor 6.4

Vol. 9 Issue 4 August 2023

Editor-in-Chief : Dr. Bijender Singh

Email : editor@expressionjournal.com

www.expressionjournal.com

The Expression: An International Multidisciplinary e-Journal
(A Peer Reviewed and Indexed Journal with Impact Factor 6.4)
www.expressionjournal.com ISSN: 2395-4132

श्यौराज सिंह बेचैन की आत्मकथा 'मेरा बचपन मेरे कंधों पर' में वेदना, संघर्ष एवं स्त्री: दलित परिपेक्ष्य में विश्लेषण

महामद अली
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग
शासकीय महिला महाविद्यालय, दावणगेरे (कर्नाटक)

सारांश

श्यौराज सिंह बेचैन द्वारा लिखित 'मेरा बचपन मेरे कंधों पर' नामक आत्मकथा दलित साहित्य का एक अद्वितीय दस्तावेज़ है, जिसमें वे अपने बचपन के संघर्षों, दलित वेदनाओं, अस्पृश्यता और भूखमरी की कहानी को दर्शाते हैं। यह आत्मकथा उनके बचपन की तथ्यवादी और असीम संघर्षों की कहानी प्रस्तुत करती है, जब उनके पिता की मृत्यु के बाद उनके परिवार का जीवन कठिन हो गया। उन्होंने संकटों का सामना कैसे किया और उन्होंने अपने जीवन-यापन के लिए कैसे संघर्ष किया, यह सब कुछ उनके अनुभवों के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इस आत्मकथा में श्यौराज सिंह बेचैन ने अपने परिवार, समाज, और आत्म-संघर्ष की दुखद यात्रा को विस्तृत रूप में चित्रित किया है। उन्होंने अपनी आत्मकथा के माध्यम से दलित चेतना का संचार करते हैंउसकी माँ सूरजमुखी की समस्या केवल यह नहीं है कि वह विधवा स्त्री है, बल्कि उसकी मुख्य समस्या यह भी है कि वह एक दलित विधवा है। इस आत्मकथा द्वारा लेखक यह भी दिखाने का प्रयत्न करता है कि कैसे एक असहाय स्त्री और एक असहाय दलित स्त्री के बीच बड़ा अंतर होता है। अगर छूआछूत या भेदभाव नहीं होता तो वह किसी भी तरह अपने और अपने बच्चों का पेट पाल सकती, लेकिन उसके दलित होने की वजह से उसके घर में या उसके हाथों से बने हुए कोई भी खाने की चीज नहीं खा सकता था। इसी कारण वह और उसके बच्चे दर-दर की ठोकरों का सामना करने में मजबूर होते हैं। जबकि, एक सवर्ण स्त्री गाँव में रहकर काम कर सकती है, उसे किसी भेदभाव का सामना नहीं करना पड़ता है। यह आत्मकथा एक ओर दलित जीवन की अनुभव-कथा है और दूसरी ओर नव स्त्री विमर्श की जमीनी अभिव्यक्ति है।

कुंजी शब्द

दलित आत्मकथा, संघर्ष, स्त्री विमर्ष, दुखद जीवन यात्रा, सामाजिक परिवर्तन, छूआछूत, वेदना, जातिगत भेदभाव।

श्यौराज सिंह बेचैन की आत्मकथा 'मेरा बचपन मेरे कंधों पर' में वेदना, संघर्ष एवं स्त्री: दलित परिपेक्ष्य में विश्लेषण

महामद अली
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग
शासकीय महिला महाविद्यालय, दावणगेरे (कर्नाटक)

::

दलित वे गरीब और बहिष्कृत लोग हैं जो अपनी जीवनशैली को दूसरों की दया पर जीते हैं, सिर्फ इसलिए कि उन्हें उनकी कम जाति की स्थिति के कारण मुख्य समाज द्वारा स्वीकार नहीं किया जाता। भारतीय सामाजिक प्रणाली उस समय की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बनाई गई थी क्योंकि उस समय में मुद्रा ने इतनी महत्वपूर्ण भूमिका नहीं खेली थी, और अधिकांश काम वस्त्रों के आदान-प्रदान के द्वारा किए जाते थे। इसी कारण भारतीय समाज को विभिन्न जातियों में विभाजित किया गया था। प्राचीन भारतीय हिन्दू समाज को चार वर्णों में विभाजित किया गया था और ये वर्ण अपने विशिष्ट तरीके से महत्वपूर्ण थे। इन वर्णों में से, शूद्र वर्ग थे जो सबसे निम्न वर्ग के थे और उन्होंने सभी प्रकार के निम्नस्तरीय काम किए। उन्हें उन सभी कामों को करने की आवश्यकता थी जिन्हें अन्य तीन वर्णों द्वारा घृणित किया गया था। समय के साथ, हिन्दू समाज में भी परिवर्तन आये और इनमें से एक वर्ग था जो पशुओं की लाशों की खाल उतारने और उन्हें विनिर्माण करने वाले लोग थे। ये लोग चमड़े की सामूहिक कारोबार में शामिल थे और 'चमार' के रूप में जाने जाते थे। भारत के विभिन्न राज्यों में उन्हें विभिन्न नामों से जाना जाता है, जो मुख्य रूप से किसी भी प्रकार के चमड़े के काम से जुड़े होते हैं। वे लोग लोगों के लिए जूते बनाते हैं। यह जाति आमतौर पर उत्तर भारत में पाई जाती है।

ऋग्वेद में विभिन्न चमड़े के वस्त्रों का संदर्भ दिया गया था। चमड़े के किल्ले और कवच बनाकर तालबंदों और चमड़े कारीगरों ने प्राचीन काल में समाज की युद्धों में मदद की। इस प्रकार, यह जाति प्राचीन काल से बहुत सहायक रही है। वर्तमान समय में, यह आमतौर पर दिखता है कि भारतीय गांवों में कुछ ही लोग मुख्य रूप से चमड़े की जूतियाँ बनाते हैं। यह पेशा उत्तर भारत में सिर्फ सौ साल पहले भी बहुत प्रसिद्ध था। इस संदर्भ में जब इस जाति की चर्चा होती है तो एक नाम, डॉ. श्यौराज सिंह बेचैन मन में उठता है। उनका परिवार 'चमार' जाति से संबंधित था, जिसे उन्होंने खुलेआम अपनी आत्मकथा में लिखा है क्योंकि वह अपनी जाति को छुपाना नहीं चाहते थे। उन्होंने उत्तर प्रदेश के बदायूं जिले के नदरौली गांव में जन्म लिया था। श्यौराज वर्तमान में दिल्ली विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में हेड और प्रोफेसर के रूप में कार्यरत हैं। उनकी आत्मकथा 'मेरा बचपन मेरे कंधों पर' को 2009 में वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित किया गया था और यह 2018 में ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली द्वारा 'माय चाइल्डहुड ऑन माय शोल्डर्स' के नाम से अंग्रेजी में प्रकाशित हुआ था।

श्यौराज सिंह बेचैन वर्णन करते हैं कि उनका बचपन उनके पिता की मृत्यु के बाद बिलकुल गरीबी में बिता। आत्मकथा में लेखक वर्णन करते हैं कि उनके पिता की मृत्यु के समय उनके परिवार पर कैसे दुख का पहाड़ टूटता है,

जब उनके पिता की मौत के बाद उनके छोटे बच्चे और एक युवा पत्नी रह जाती है। उनके पिताजी के भाई बीधे फूफा और गंगावासी, सवारी और बैलों की लाशों के छिलके का व्यवसाय करके अपनी रोज़ी-रोटी कमाते आए थे। जब श्यौराज सिंह बेचैन केवल पांच या छह साल के थे, तो उनके पिता की मृत्यु हो गई। परिवार में कोई आय का स्रोत नहीं था और उन्हें हाथ में से मुंह में जीना पड़ता था। उनकी जाति के कुछ लोग अपनी उन्नति की भावना दिखाते थे, हालांकि वे भी धनी नहीं थे।

श्यौराज बताते हैं कि उनके पिता राधे ने उन्हें छोटी बुआ के गाँव की शादी में अपने कंधों पर बैठा कर लेकर गये थे। उनके चाचा प्यारेलाल भी साथ थे। श्यौराज की माँ बहुत चिंतित थी क्योंकि गाँव दूरी पर था। उनके पिता ने रास्ते में कई जगहों पर आराम किया और कुओं में पानी पीने के लिए उन्हें पानी दिया। श्यौराज बताते हैं कि उनकी बुआ के ससुराल वाले भी बहुत गरीब थे और उनके बच्चे स्कूल नहीं जाते थे।

श्यौराज सिंह बेचैन की आत्मकथा में उनके बचपन के घटनाओं का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि उस गाँव के लोग अंधविश्वास में विश्वास करते थे। उनके पिता राधे शराब नहीं पीता था, लेकिन कुछ लोग उसे किसी भी तरीके से बहकाने में सफल हो गए। उनकी सेहत खराब हो गई। उनको उल्टियाँ आने लगी और शरीर में पानी की कमी हो गयी। गाँव में औषधि की व्यवस्था नहीं थी और उनके पास उपचार के लिए पर्याप्त पैसे भी नहीं थे। वे झाड़-फूंक करने वाले लोगों को बुलाते थे जिससे उनके पिता की हालत और भी बिगड़ रही थी, लेकिन झाड़-फूंक करने वाले लोग उन्हें तमाचे और लाठियों से मारते रहे क्योंकि वे उन्हें बता रहे थे कि वे बुरी आत्माओं को दूर करने का प्रयास कर रहे हैं। उनके पिता राधे बोल रहे थे कि किसी भी बुरी आत्मा ने उनके शरीर में प्रवेश नहीं किया है। वे अपने उपचार के लिए डॉक्टर को बुलाने की बात कह रहे थे, लेकिन किसी ने उनकी बात पर ध्यान नहीं दिया और झाड़-फूंक करने वाले लोग उन्हें तीन दिनों तक मारते रहे।

श्यौराज सिंह अपने पिता की इस स्थिति को देखकर बहुत परेशान हो रहा थे। उनकी मां, महान चाचा और चाचा भी गाँव से बुलाए गए थे जब उनके पिता की हालत और बिगड़ गई। श्यौराज की मां के एक सप्ताह या दो सप्ताह पहले एक बेटे का जन्म हुआ था और दूसरा बच्चा अभी उनकी गोद में था। श्यौराज के परिवार में, ताऊ और उनके गंगी चाचा अंधे थे और उनके बीधे चाचा लंगड़े थे। जब झाड़-फूंक करने वाले लोगों को यह पता चला कि राधे की स्वास्थ्य स्थिति गंभीर है, तो उन्होंने अपने पैसे लिए और भाग गए।

जब श्यौराज की मां रात में पहुँची, तो उनके पिता की आखिरी साँसें थम गई थी। उनके मौत के बाद घर के सभी लोग रो रहे थे। उनका जीवन दुख से भर गया था। अब उनका परिवार चलाना उनकी जिम्मेदारी बन गई थी। उनकी अंतिम संस्कार का वर्णन भी हृदय को द्रवित करने वाला है। एक उच्च जाति के व्यक्ति की एक बैल गाड़ी मंगवाई गई थी और उसमें श्यौराज, उनकी मां मुखी और रामभरोसे बैलगाड़ी में बैठे थे। उनके दादा भी बैल गाड़ी के पीछे बैठे थे और वे श्यौराज की मां को सम्बोधित कर रहे थे जब वह रो रही थी और कह रहे थे कि मुखी बेटा, तुम्हें अपने दिल को समझाने की जरुरत है। मेरा बेटा तीन छोटे बच्चे पीछे छोड़ गया है। तुम्हारी जिम्मेदारी है कि तुम उनके हित की रक्षा करो। तुम्हारे पास अपने आंसू बहाने का पूरा जीवन है। बच्चों के बारे में सोचो।

श्यौराज इस भयानक घटना को अपने जीवन में कभी नहीं भूल सके। उनके दादा भगीरथ, गंगी और ताऊ बाबूराम अंधे थे। उनकी दादी, विधारम लंगड़ी थी। इस प्रकार, उनके परिवार में ये सभी लोग विकलांग थे। परिवार को कम से कम एक युवा आदमी की आवश्यकता थी जो इस परिवार के लिए रोटी कमा सकता। उनकी मां की आयु केवल 25 साल थी। उनके पिता की मौत के कुछ दिनों बाद, परिवार में खाने के लिए कुछ भी नहीं बचा था। बेचैन लिखते हैं कि इन सब परेशानियों में भी उनके पास किसी का सहारा नहीं था, और संसाधनों की कमी के बावजूद, उनकी बस्ती के लोगों ने उन्हें अपने लिए एक धार्मिक भोजन का आयोजन करने के लिए मजबूर किया। इन लोगों के लिए भोजन की व्यवस्था करना एक बड़ी चुनौती थी। इस धार्मिक आयोजन के बाद घर में कोई अनाज नहीं बचा था। उसके बाद श्यौराज, उनके ताऊ और दादा घर के सामने बैठे रहते थे ताकि उन्हें किसी भी प्रकार का श्रमिक काम मिल सके।

श्यौराज के छोटे भाई, नेकसिंह की मृत्यु की घटना भी इस आत्मकथा में वर्णित है। नेकसिंह को भी अपनी बीमारी में अपने पिता की तरह किसी भी तरह के चिकित्सा उपचार का लाभ नहीं मिल पाया और उसकी असमय मृत्यु हो गई। श्यौराज की मां ने अपने माता-पिता के दबाव में एक और गरीब आदमी रामलाल से विवाह किया था। श्यौराज के दादा-दादी से मुखी के पिता ने कोई सलाह नहीं ली गई। श्यौराज के सौतेले पिता भी बहुत गरीब थे और कुछ समय बाद उनकी मां मुखी के साथ झगड़ने लगे, कहते हुए कि वह उनके बच्चों को पोषण नहीं कर सकते। उन्हें चाहिए था कि वह अपने दादी के घर पर बच्चों को छोड़ दें, लेकिन श्यौराज की मां ऐसा नहीं चाहती थी। इस प्रकार, पैसे परिवार में झगड़े का मुख्य कारण बन गए। मुखी अपने संघर्ष को कहीं भी अतिरंजित करके नहीं बताती,जबकि दिल्ली में मुखी जहां अनाज साफ करने जाती है उसकी मालकिन कहती है,"सूरजमुखी औरतों में हिम्मत होनी चाहिए। विधवा तो मैं भी हुई थी, पर मैंने विधवा होकर भी अपने बच्चों को डॉक्टरी और इंजीनियरिंग में भेज दिया, और तुम गांव की औरतें बुजदिल होती हो। हमेशा मर्द पर ही निर्भर रहती हो। अपनी खुद्दारी को पहचानती नहीं हो" (140)। परन्तु मुखी कहती है कि यह केवल परिस्थितियों पर निर्भर करता है। मुद्राराक्षस अपनी पुस्तक 'स्त्री, दलित, जातीय दंश' में लिखते हैं:

> सवर्ण समाज में स्त्रियों को अपनी हैसियत बनाने के लिए धन, शिक्षा, ऊँचे संबंध और जानकारियाँ सवर्ण पुरुषों की तुलना में कम उपलब्ध होती हैं। पर दलित एवं पिछड़े समाज में पुरुषों के पास हैसियत बनाने के अवसर सवर्ण पुरुषों की तुलना में बहुत कम होते हैं और ऐसे दलित-पिछड़े समाज की स्त्रियों के पास हैसियत के कारक लगभग शून्य होते हैं। (23)

श्यौराज के जीजा की मृत्यु भी उन पर एक और प्रकार का प्रहार था। पड़ोस के लोग उनकी शवसंस्कार के लिए आगे आए और एक अनजान व्यक्ति ने उनकी शवसंस्कार में बहुत मदद की। उनका परिवार इतना असहाय था कि उनके पास दाहसंस्कार के लिए पर्याप्त पैसे भी नहीं थे। बेचैन की मां को पछतावा था कि गरीब होने के कारण उनके पास दाह-संस्कार के भी पैसे नहीं हैं।

श्यौराज की मां को फिर भिकारी नाम के एक और व्यक्ति के साथ शादी करनी पड़ी। भिकारी अक्सर गुस्सा करने वाला आदमी था और अपनी और सूरजमुखी की संतानों में भेदभाव करता था। हालांकि सूरजमुखी कई बार अपने बच्चों की जरूरतों के चलते उसके पास रहना पड़ता था, लेकिन वह कभी भी अपनी स्वीकृति और सम्मान को खोने के लिए तैयार नहीं थी। फिर भी, वह भिकारी और उसके देवर डालचंद द्वारा की जाने वाली मार-पीट के सामना करती रही, पर कभी झूठ बोलने का सहारा नहीं लिया। इसके बावजूद, भिकारी हर रविवार को गंगा नदी में स्नान करने जाता था, जबकि वह अपनी और सूरजमुखी की संतानों में भेदभाव करता था। भिकारी और उसके देवर डालचंद के खूब मारने पीटने के बाद भी उसने पिटने के डर से झूठ का सहारा नहीं लिया। सूरजमुखी ने उसकी दोहरी मानकों का मजाक उड़ाते हुए कहा, "भिकरिया बन्दे तू सुरग चाहतु है तो अपने करम संभारि। हर इतवार गंगा में डुबकी मारन तें तेरी बगुला भगति ते तेरे मन के पाप नॉय धुल जागें" (31)। भिकारी ने भी मुखी के बच्चों से छुटकारा पाने के लिए कुछ चालबाज़ तरीके अपनाए। उसने एक ठेकेदार से पैसे ले लिए और श्यौराज और उनकी बहन माया को भट्टे पर काम करने के लिए भेज दिया। श्यौराज और माया अब सिर्फ बच्चे थे और उनके शरीर में काम करने के लिए पर्याप्त विकसित नहीं हुआ था। श्यौराज को किसी भी तरह का काम करना पड़ता था जो उसे किसी से मिलता। वह रेलवे स्थानकों, होटलों और सिनेमा घरों में जूते पोलिश करने लगा। श्यौराज और उनकी मां को सिर पर भारी बोझ उठाना पड़ता था। श्यौराज को शिक्षा प्राप्त करने में कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। उनके सौतेले पिता ने उनके स्कूल फीस देने से मना कर दिया और जब श्यौराज मिट्टी के तेल की रोशनी में पढ़ते थे तो उनके सौतेले पिता उनसे झगड़ते थे।

पितृसत्ता जाति, धर्म या संप्रदाय नहीं देखती। दलित पुरुष भी अंततः पुरुष ही है और दलित स्त्री भी अंततः स्त्री है। भिकारी का सूरजमुखी को तिहरे अधिकार से मारना इसी पितृसत्ता का दंभ है। इस आत्मकथा में सूरजमुखी का विरोधाभासपूर्ण आवाज भी सुनाई देता है, जो स्त्रीवादी नहीं है, बल्कि स्वीकृति की मांग करती है। समाज में

विभेद और स्थिति की प्रतिष्ठा की भावना ने हमें बाँट दिया है, जहाँ हर किसी को अपने आप को दूसरों से बेहतर महसूस करने की खोज है।

श्यौराज सिंह बेचैन इस आत्मकथा में बाल विवाह की समस्या के बारे में भी लिखते हैं। यह समाज में एक सामाजिक बुराई के रूप में नहीं माना जाता था क्योंकि अधिकांश लोग इसके बारे में जागरूक नहीं थे। उनकी बहन की शादी गंगावसी के साथ हुई थी, जो उनकी बहन से दस या पंद्रह साल बड़ा था। जब श्यौराज उसके ससुराल जाते थे, तो उन्हें अच्छा आतिथ्य मिलता था। उन्हें मिठाई भी खिलाई जाती थी।

उन्होंने एक घटना का वर्णन भी किया है जब उनकी टांग बहुत ही बुरे ढंग से घायल हो गई। वे खेत में हल चला रहे थे और हल चलाते-चलाते भी वो कविता लिखते रहते थे। कुछ विचार उनके मन में आये और उन्होंने बैलों को रोक लिया ताकि वह कुछ समय के लिए अपनी कविता लिख सकें। लेकिन पेन जेब से निकलते समय उनका संतुलन खो गया और उनकी टांग बिलकुल घायल हो गयी। उन्होंने अपनी टांग को मजबूती से बांध दिया और किसी तरह घर पहुंचे। उन्होंने भयानक गरीबी में बहुत बहादुरी दिखाई। इस बारे में यह दर्जन दर्जन का उल्लेख है कि वे कभी नहीं हारे। उनकी मां उनसे कहती हैं, “अब तोईअपनी जिंदगी अपनी कमाई पर गुजारनी है। जिद्द छोड़, कुछ काम सीख ले। कुछ नहीं तो साइकिल में पिंजर जोड़ना ही सीख ले” (41)। मुखी इतनी परेशान हो जाती है कि वह अपने बेटे श्यौराज से कहती है कि “बेटा इंदिरा के राज में कहते हैं सब सुखी हो गयै है पर ये कैसा स्वराज है जिसमें एक असहाय चमारिन का दुख किसी को नहीं दिखता” (78)।

श्रेष्ठ वर्ग ने दलितों की दयनीय स्थिति से हमेशा लाभ उठाया है। लेखक के पिता, राधे की मृत्यु के बाद, उनका जीवन गरीबी में डूब गया। वित्तीय कमजोरी के कारण, उनके जीवन के प्रारंभिक दौर में, उनका पूर्वजाति व्यवसाय ही सहारा था। इस संदर्भ में, उन्होंने लिखा है, मैं जब से समर्थ हुआ न जाने कितने कटरे-कटरियां, गाय-बैल और भैंसे उठाने में शामिल रहा था, उन सब की खाल उतारना मैं आज भी भूला नहीं हूं” (59)। ऐसे काम के कारण, लेखक और उनके परिवार के सदस्यों को समाज ने तिरस्कार और अपमान का सामना किया। हालांकि यह एक आवश्यक सेवा थी, उन्हें आगे भी तिरस्कृत और अपमानित किया गया। लेखक आत्मकथा में लिखते हैं, “डॉक्टर मनुष्य की लाश का पोस्टमार्टम करता है तो इज्जतदार होता है, भंगिन सफाई करती है तो दुत्कारी जाती है। चमार पशु की खाल उतारता है तो वह बहिष्कृत और अछूत बन रहता है” (31)। श्यौराज सिंह बेचैन ने 'मेरा बचपन मेरे कन्धों पर' आत्मकथा में महिलाओं की दयनीय स्थिति और उनके संघर्षपूर्ण जीवन को आदर्शपूर्ण तरीके से प्रस्तुत किया है। भारतीय समाज में धर्म और नैतिकता के नाम पर महिलाओं पर हो रहे अत्याचार की बात खुद उनके लेखों से सामने आती है। वर्ण और नैतिकता के नाम पर आत्मा की अत्याचार के साथ साथ समाज में उनके बारे में भीतर की नीची सोच का परिचय मिलता है।

लेखक द्वारा दिखाया गया है कि समाज में आदमी जितना भी कमजोर क्यों न हो, उसकी आत्मा में नीचापन की भावना आती है और विशेष रूप से उसकी पत्नी के प्रति अपनी ताकत का प्रदर्शन करने की इच्छा होती है। विवाह के प्रति समाज की दृष्टि से एक पुरुष का अधिकार माना जाता है, जिससे उसके दलित समाज के पुरुषों पर भी यह सच्चाई लागू होती है। दलित समाज की महिलाओं की स्थिति भी उसी प्रकार की होती है, जैसे उच्चवर्ण समाज की महिलाएं होती हैं, लेकिन उन्हें भी आत्मनिर्भरता की कमी और उनके अधिकारों की हिन्दू समाज में दी जाने वाली उपेक्षा का सामना करना पड़ता है।

लेखक की मां, सूरजमुखी, श्यौराज के पिता की मृत्यु के बाद अपने बच्चों की परवरिश करने में संघर्ष करती हैं, जिससे वह समाज में उनके लिए एक प्रेरणास्रोत बनती हैं। मातृत्व की महत्वपूर्ण भूमिका के बावजूद, उनकी आर्थिक स्थिति कमजोर होती है और वे अपने बेटे के सपनों को पूरा करने के लिए अनेक कठिनाइयों का सामना करती हैं। लेखक द्वारा प्रस्तुत इस आत्मकथा में बताया गया है कि महिलाएं न केवल अपने अधिकारों की मांग करती हैं, बल्कि उन्हें अपनी स्थिति में सुधारने की भी आवश्यकता होती है। वे समाज में अपनी मौजूदगी को मजबूती और सम्मान की दिशा में परिवर्तित करने के लिए संघर्ष करती हैं। इस आत्मकथा में लेखक ने दिखाया है कि गरीबी और भूख की समस्या महिलाओं के जीवन में कितनी विकट होती है और यह कैसे समाज में विभिन्न रूपों में उनकी पीड़ा का कारण

बनती है। यह समस्याएं सिर्फ आर्थिक ही नहीं होती, बल्कि उनकी सामाजिक स्थिति, वर्गवाद और व्यापारिक शोषण की वजह से भी उत्पन्न होती हैं।

इस आत्मकथा से यह निष्कर्ष है कि दलित समाज की महिलाएं अपने अधिकारों की रक्षा के लिए उत्साहित होने के साथ-साथ अपनी आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए भी प्रतिबद्ध होनी चाहिए। इससे हम समाज में समानता और न्याय की दिशा में कदम बढ़ा सकते हैं और उन्हें सशक्त बनाने के लिए आवश्यक संविधानिक और सामाजिक सुधारों की दिशा में काम कर सकते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. जोशी, गोपा, 'भारत में स्त्री असमानता: एक विमर्श', हिंदी माध्यम कार्यांवयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 2006.
2. पुतुल, निर्मला, 'नगाड़े की तरह बजते शब्द' (हिन्दी रूपांतर-अशोक सिंह) भारतीय ज्ञानपीठ, द्वितीय संस्करण, 2005. वाल्सटनक्राफ्ट, मैरी, 'स्त्री अधिकारों का औचित्य साधन', राजकमल प्रकाशन, दिल्ली संस्करण, 2009.
3. बाउवार, द सिमोन, 'स्त्री उपेक्षिता' (हिंदी रूपांतर-प्रभा खेतान), हिंदी पॉकेट बुक्स, दिल्ली संस्करण, 2004.
4. बेचैन, श्यौराज सिंह, 'मेरा बचपन मेरे कंधों पर', वाणी प्रकाशन, दिल्ली संस्करण, 2009.
5. मुद्राराक्षस, 'स्त्री, दलित और जातीय दंश', गौतम बुक सेंटर, दिल्ली संस्करण, 2011.
6. यादव, राजेंद्र, 'आदमी की निगाह में औरत', राजकमल प्रकाशन, दिल्ली संस्करण, 2007.
7. वनकर, धीरजभाई, 'हिन्दी दलित आत्मकथा विमर्श', ज्ञान प्रकाश, कानपूर, प्रथम संस्करण, 2017.